वेदों में नीति–शिक्षा

नीतिशास्त्र जीवन के व्यापक स्वरूप को प्रकट करता है। इसके अन्तर्गत सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक, राजनीतिक सभी विषय आ जाते हैं। मनुष्य को अपने–पराये, सजातीय–विजातीय, मित्र–शत्रु, परिचित–अपरिचित आदि से कैसा व्यवहार करना चाहिए, इसका ज्ञान नीति संबंधी शिक्षा से ही प्राप्त होता है। व्यक्ति विश्वशांति, विश्व–संस्कृति और विश्व–बंधुत्व की भावना का कैसे उन्नयन कर सकता है, इसका ज्ञान भी नीति–शिक्षा से ही मिलता है। वेदों में नीति–शिक्षा से संबंधित सभी विषयों की सामग्री का विपुल भंडार है। पर, यहां पर उनका संक्षेप में ही वर्णन किया जा रहा है।

1. **सत्य का महत्व**–समाज और राष्ट्र की उन्नति के लिए सत्य का स्थान सर्वोपरि है। सत्य के प्रतिष्ठित होने पर ही राष्ट्र का कल्याण संभव है। अथर्वेद (12.1.1) का कथन है कि सत्य, ऋत, दीक्षा, तप, ब्रह्म और यज्ञ ने ही पृथ्वी को धारण कर रखा है–**'सत्यंबृहदृमुग्रं दीक्षा तपो ब्रह्म, यज्ञः पृथ्वी धारयन्ति।'** यजुर्वेद (1.5) का कथन है कि यज्ञ की सफलता तभी संभव है जब हम असत्य को छोड़कर सत्य का अनुसरण करते हैं। ऋग्वेद (1.21.6) के अनुसार सत्य से ही जीवन में जागृति आती है और वही मनुष्य की रक्षा भी करता है।

2. **धन वैभव की आवश्यकता**–व्यक्ति को अपने जीवनयापन के लिए धन–संपदा की आवश्यकता पड़ती है। इसलिए वेदों के अनेक मंत्रों में धन–वैभव की प्राप्ति के लिए प्रार्थना की गई है। यजुर्वेद (10.20) का कथन है कि हम धन–वैभव के स्वामी बनें। ऋग्वेद (7.32.21) के अनुसार प्राप्त अवसर का लाभ न उठाने वाले व्यक्ति को धन–संपत्ति की प्राप्ति नहीं होती।

3. **दान की महिमा**– अथर्ववेद (3.24.5) का कथन है कि सौ हाथों से धन अर्जित करो और सहस्त्र हाथों से उसका दान करो। ऋग्वेद (10.107.8) के अनुसार दानी पुरूष अमरत्व को प्राप्त करते हैं और उनकी योजनाएँ कभी असफल नहीं होती। ऋग्वेद (1.125.6) के ही अनुसार दानी पुरूषों की आयु और यश बढ़ जाता है और उनमें वैराग्य की वृति का विस्तार होता है।

4. **परोपकार की भावना–** ऋग्वेद (10.117.6) के अनुसार अकेला खानेवाला व्यक्ति पापी होता है। उस व्यक्ति का धनी होना व्यर्थ है जो अपने इष्टमित्रों की सहायता नहीं करता। ऋग्वेद (9. 63.5) का ही कथन है कि कृपण मनुष्य समाज का शत्रु है। यजुर्वेद (29.51) के अनुसार प्रत्येक मनुष्य का कर्तव्य है कि वह दूसरे व्यक्ति की यथासंभव सहायता करे।

5. **पुरूषार्थ की आवश्यकता–**यजुर्वेद (40.2) का कथन है कि मनुष्य सौ वर्ष तक पुरूषार्थ करता हुआ जीवित रहे–**'शरदं जीवेत शतम्।'** अथर्ववेद (20.18.3) के अनुसार देवता भी पुरूषार्थ करने वाले व्यक्ति की ही सहायता करते हैं और उसे ही चाहते भी हैं। इस वेद के मंत्र (7.50.8) के अनुसार यदि हमारे दायें हाथ में पुरूषार्थ है तो बांए हाथ में विजय सुनिश्चित है।

6. **पारिवारिक सुख प्राप्ति का रहस्य–**अथर्ववेद (3.30.1) का कथन है कि पारिवारिक सुख–समृद्धि का साधन परस्पर प्रेम, सहृदयता और सामंजस्य है। जिस प्रकार गाय अपने नवजात बछड़े से प्रेम करती है, उसी प्रकार का प्रेम परिवार में होना चाहिए। अथर्ववेद(3.3.2.3) में ही आगे कहा गया है कि पति–पत्नी परस्पर मधुर वचन बोलें। पुत्र का कर्तव्य है कि वह पिता का आज्ञाकारी हो और माता का आदर करे। भाई अपने भाई से प्रेम करे और बहिन अपनी बहिन से। कोई भी परस्पर कटुता न रखे।

7. **संगठन की महत्ता–**ऋग्वेद (10.191.2–4) के संज्ञानसूक्त में संगठन के स्वरूप का बहुत ही सुंदर चित्रण किया गया है। इस सूक्त के अनुसार–'तुम मिलकर चलो, मिलकर बोलो, तुम्हारें विचारों में हार्दिक एकता हो, तुम्हारी मंत्रणाओं, तुम्हारी सभा समिति, तुम्हारी मन और चित्त में एकता हो जिससे तुम सह–अस्तित्व का सुख प्राप्त करो।'

8. **आदर्श समाज का स्वरूप–** अथर्ववेद (3.30.5)में आदर्श समाज का सुंदर वर्णन मिलता है जिसके अनुसार लोगों में परस्पर शत्रुता न हो, लोग ज्ञानवान हों, वे बड़ों का आदर करें, परस्पर मधुर वचन बोलें और सन्मार्ग पर चलें। ऋग्वेद (5.60. 5) के अनुसार समाज में ऊँच–नीच का भेद–भाव न हो, उनमें भ्रातृप्रेम हो और वे सौभाग्य के लिए आगे बढ़ें। अथर्ववेद(7.60.4) का कथन है कि समाज में कोई भी भूखा–प्यासा न रहे, किसी

को किसी से कोई भय न हो। यजुर्वेद (36.22) में भी कहा गया है कि हमें सब ओर से अभय प्राप्त हो।

9. **जागरूक रहने की आवश्यकता**–महापुरूषों का कथन है कि मनुष्य को सदा जागरूक रहना चाहिए। ऋग्वेद (5.44.14)के अनुसार सतत् जागरूक रहने वाले मनुष्य को ही परमात्मा और समस्त वेद चाहते हैं। इसी प्रकार अथर्ववेद (2.6.3) का भी कथन है कि व्यक्ति अपने घर में सदैव प्रमादरहित होकर जागरूक और चैतन्य रहे।

10. **उन्नति की आकांक्षा**–हमें सदा अपने जीवन में उन्नति की कामना करनी चाहिए। अथर्ववेद (8.1.6) का कथन है–हे पुरूष! तेरा सदा उत्थान हो, अवनति नहीं। तुम अपने स्थान से ऊपर की ओर बढ़ो, नीचे न गिरो। ऋग्वेद (1.36.14) में भी प्रार्थना की गई है कि हे ईश! हमें प्रगति और जीवनीशक्ति के लिए उच्च चरित्रवाला पुरूष बनाओ।

11. **मधुरवाणी का महत्व**– वेदों में मधुर वचन उच्चारित करने का उपदेश दिया गया है। अथर्ववेद(16.2.2) के अनुसार हमें सदा मधुर वचन बोलने चाहिए। यजुर्वेद (21.16) का भी कथन है कि परमात्मा ने मधुर वचन बोलने के लिए ही मनुष्य को उत्पन्न किया है। वह अपनी मधुर वाणी से ही सबका चहेता और सद्भाव बढ़ानेवाला बन सकता है।

12. **सद्गुण अपनाने की आवश्यकता**–यजुर्वेद (30.3) का कथन है कि ईश्वर हमारें दुर्गुणों को दूर करे और हमें सद्गुण प्रदान करे। अथर्ववेद (20.20.6) के अनुसार सत्कर्म करनेवाले मनुष्य का भविष्य सदैव सुखद होता है। इसी वेद के मंत्र (5.18.2) के ही अनुसार पापी आज जीवित है, कल नहीं रहेगा अर्थात उसका जीवन अल्पायु होगा। पापी की कभी श्रीवृद्धि भी नहीं होती।

13. **मैत्रीपूर्ण व्यवहार**–यजुर्वेद (36.12) में सभी को मित्रस्वरूप देखने की कामना की गई है–**'मित्रस्यऽहं चक्षुसा सर्वाणि भूतानि समीक्षे।'** अर्थात धर्मात्माजन वही है जो अपनी आत्मा के समान सभी प्राणियों को मानता है, जो किसी से द्वेष नहीं करता तथा मित्र के समान सभी का सत्कार करता है।

14. **राष्ट्रप्रेम की भावना**–अथर्ववेद (12.1.12) के अनुसार पृथ्वी हमारी माता है और हम इसके पुत्र हैं–**'माता भूमि पुत्रोऽहं**

पृथिव्याः।' अथर्ववेद (12.1.62) का ही कथन है कि हम अपने देश के लिए बलिदान देने वाले बनें। यजुर्वेद (9.23) में भी कहा गया है कि हम सदा अपने राष्ट्र के प्रति जागरूक रहते हुए उसकी रक्षा के कार्य में अग्रणी रहें।

15. **स्वराज्य की पूजा**–ऋग्वेद (1.80.1) का कथन है कि स्वराज्य की पूजा की जानी चाहिए। यजुर्वेद (10.4) का भी कथन है कि हमें स्वतंत्र राष्ट प्राप्त हो। स्वराज्य तभी सफल कहा जाएगा जब जन-जन का कल्याण हो और उसमें सारी जनता सुख का अनुभव करे।

16. **विश्वबंधुत्व एवं विश्वकल्याण की भावना**– यजुर्वेद (40.7) में कहा गया है कि मानवमात्र के साथ एकत्व एवं तादात्म्य की अनूभूति होनी चाहिए ताकि विश्वबंधुत्व की भावना का प्रचार-प्रसार हो सके। विश्वकल्याण की भावना को सम्मुख रखते हुए ऋग्वेद (10.97.20) का कथन है कि संसार के सभी प्राणी निरोग और सुखी रहें–**'सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे सन्तु निरामया।'**

17. **धार्मिक जीवन**–अथर्ववेद ने मनुष्य के धार्मिक जीवन को अत्यन्त सूक्ष्मता के साथ स्पर्श किया हैं। यज्ञ और ईश्वरीय आराधना प्रत्येक व्यक्ति का कर्म ही नहीं धर्म भी है। उसके नित्य-नैमित्तिक क्रियाकलाप, अनुष्ठान, संस्कार, देवपूजा, ईश्वर में विश्वास, आत्मा में परमात्मा के स्वरूप का दर्शन प्रचुरमात्रा में अधिकांश मंत्रों में प्राप्त होता है। साथ ही धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की कामना भी अनेक मंत्रों में की गई है।

सत्यापन

सत्यापित किया जाता है कि उक्त आलेख मौलिक एवं अप्रकाशित है।

(ताराचन्द आहूजा)

ताराचन्द आहूजा
निदेशक-धार्मिक पुस्तकालय.
4/114, एस.एफ.एस., अग्रवाल फार्म,
मानसरोवर,जयपुर-302020
फोन-0141-2395703